IJISEM
INTERNATIONAL JOURNAL OF INNOVATIONS IN SCIENCE ENGINEERING AND MANAGEMENT

Check for updates

OPEN ACCESS

Volume: 2

Issue: 2

Month: June

Year: 2023

ISSN: 2583-7117

Published: 23.06.2023

Citation:

डॉ. अनुपम मित्र "खिलाफत और असहयोग आंदोलन: धार्मिक-राजनीतिक एकता और जन-आंदोलन के उदय का समालोचनात्मक अध्ययन" International Journal of Innovations in Science Engineering and Management, vol. 2, no. 2, 2023, pp. 63-67

DOI:

10.69968/ijisem.2023v2i263-67

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Share Alike 4.0 International License

खिलाफत और असहयोग आंदोलन: धार्मिक-राजनीतिक एकता और जन-आंदोलन के उदय का समालोचनात्मक अध्ययन

डॉ. अनुपम मित्र[1]

[1] सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, राजकीय महाविद्यालय, स्वार, रामपुर(उ.प्र.).

सारांश

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन ने एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का अनुभव किया, जिसमें उसकी प्रकृति अभिजात्य सीमाओं से निकलकर जनआधारित स्वरूप में परिवर्तित हुई। इस परिवर्तन में खिलाफत आंदोलन और असहयोग आंदोलन की संयुक्त भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। प्रस्तुत अध्ययन इन दोनों आंदोलनों के ऐतिहासिक संदर्भ, वैचारिक आधार तथा उनके पारस्परिक संबंधों का समालोचनात्मक विश्लेषण करता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि धार्मिक और राजनीतिक तत्वों के समन्वय ने भारतीय राष्ट्रवाद को नई दिशा प्रदान की तथा व्यापक जनसहभागिता को सुनिश्चित किया। साथ ही, यह भी पाया गया कि यद्यपि इन आंदोलनों ने हिंदू-मुस्लिम एकता को सुदृढ़ किया, तथापि उनके अंतर्विरोधों ने दीर्घकालिक चुनौतियाँ भी उत्पन्न कीं। इस प्रकार, ये आंदोलन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के विकास में एक महत्वपूर्ण मोड़ का प्रतिनिधित्व करते हैं।

कुंजी शब्द: खिलाफत आंदोलन, असहयोग आंदोलन, राष्ट्रवाद, जनसहभागिता, धार्मिक-राजनीतिक एकता

परिचय

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन ने एक ऐसे निर्णायक चरण में प्रवेश किया, जहाँ उसकी प्रकृति, स्वरूप और रणनीति में गहरा परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तक यह आंदोलन मुख्यतः शिक्षित मध्यमवर्गीय नेतृत्व के अधीन था और इसकी कार्यप्रणाली याचिकाओं, प्रस्तावों तथा संवैधानिक सुधारों की मांग तक सीमित थी। किन्तु प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात उत्पन्न राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों ने इस सीमित आंदोलन को व्यापक जनआधारित स्वरूप ग्रहण करने के लिए प्रेरित किया। इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में खिलाफत आंदोलन और असहयोग आंदोलन का उदय हुआ, जिन्होंने भारतीय राष्ट्रवाद को एक नई दिशा प्रदान की।

खिलाफत आंदोलन का उद्भव मुख्यतः धार्मिक और अंतरराष्ट्रीय घटनाओं से जुड़ा हुआ था, जबकि असहयोग आंदोलन औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध एक संगठित राजनीतिक प्रतिक्रिया के रूप में सामने आया। इन दोनों आंदोलनों का सम्मिलन भारतीय इतिहास में एक अद्वितीय घटना के रूप में देखा जाता है, जहाँ धार्मिक भावनाएँ और राजनीतिक उद्देश्य एक-दूसरे के पूरक बन गए। इस संयुक्त आंदोलन ने पहली बार व्यापक स्तर पर हिंदू-मुस्लिम एकता को एक ठोस राजनीतिक स्वरूप प्रदान किया और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को अभिजात्य सीमाओं से निकालकर जन-आधारित आंदोलन में परिवर्तित किया।

यह अध्ययन इस बात का विश्लेषण करता है कि किस प्रकार खिलाफत और असहयोग आंदोलनों ने न केवल औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष को तीव्र किया, बल्कि भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों को एक साझा मंच पर लाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसके अंतर्गत इन आंदोलनों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, वैचारिक आधार, संगठनात्मक स्वरूप तथा उनके दीर्घकालिक प्रभावों का समालोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

औपनिवेशिक संदर्भ और युद्धोत्तर परिस्थितियाँ

प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात भारत की राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों में व्यापक परिवर्तन देखने को मिले। युद्ध के दौरान ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों से सहयोग प्राप्त करने के लिए अनेक वादे किए थे, जिनमें राजनीतिक सुधारों और स्वशासन की दिशा में प्रगति का आश्वासन शामिल था। किन्तु युद्ध समाप्त होने के बाद इन वादों को अपेक्षित रूप से पूरा नहीं किया गया, जिससे भारतीयों में गहरा असंतोष उत्पन्न हुआ।

आर्थिक दृष्टि से भी युद्ध के परिणामस्वरूप महँगाई, बेरोजगारी और संसाधनों की कमी जैसी समस्याएँ उत्पन्न हुईं। किसानों, श्रमिकों और निम्न वर्गों पर इसका विशेष प्रभाव पड़ा। साथ ही, कठोर कर नीतियों और राजस्व वसूली ने जनसाधारण की कठिनाइयों को और बढ़ा दिया। इन परिस्थितियों ने समाज में असंतोष को व्यापक रूप से फैलाया, जो धीरे-धीरे राजनीतिक चेतना में परिवर्तित होने लगा।

राजनीतिक स्तर पर भी दमनात्मक नीतियों ने स्थिति को और अधिक गंभीर बना दिया। औपनिवेशिक शासन ने असंतोष को दबाने के लिए कठोर कानूनों और दमनकारी उपायों का सहारा लिया, जिससे जनता में आक्रोश और बढ़ गया। इस प्रकार, युद्धोत्तर भारत एक ऐसे संक्रमण काल से गुजर रहा था, जहाँ असंतोष, असुरक्षा और अपेक्षाओं का मिश्रण राष्ट्रीय आंदोलन को एक नए चरण में प्रवेश करने के लिए प्रेरित कर रहा था।

इन्हीं परिस्थितियों ने ऐसे नेतृत्व और रणनीति की आवश्यकता को जन्म दिया, जो न केवल राजनीतिक रूप से प्रभावी हो, बल्कि जनसामान्य को भी आंदोलन से जोड़ सके। इस आवश्यकता की पूर्ति महात्मा गांधी के नेतृत्व में हुई, जिन्होंने असहयोग आंदोलन के माध्यम से इस असंतोष को संगठित रूप प्रदान किया।

खिलाफत आंदोलन की उत्पत्ति और धार्मिक आयाम

खिलाफत आंदोलन का उद्भव मुख्यतः अंतरराष्ट्रीय घटनाओं से संबंधित था, विशेष रूप से प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात ओटोमन साम्राज्य की स्थिति में आए परिवर्तन से। इस साम्राज्य का शासक खलीफा मुस्लिम जगत का धार्मिक प्रमुख माना जाता था, और उसकी सत्ता में कमी को विश्वभर के मुसलमानों ने एक गंभीर धार्मिक संकट के रूप में देखा।

भारत में इस घटना का गहरा प्रभाव पड़ा और मुस्लिम समुदाय के भीतर व्यापक असंतोष उत्पन्न हुआ। इस असंतोष को संगठित रूप देने के लिए विभिन्न नेताओं ने प्रयास किए, जिन्होंने खलीफा की स्थिति की रक्षा के लिए आंदोलन प्रारंभ किया। यह आंदोलन शीघ्र ही एक व्यापक सामाजिक और राजनीतिक स्वरूप ग्रहण कर गया, क्योंकि इसमें केवल धार्मिक भावनाएँ ही नहीं, बल्कि औपनिवेशिक शासन के प्रति असंतोष भी शामिल हो गया।

खिलाफत आंदोलन की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसने भारतीय मुस्लिम समाज को एकजुट करने का कार्य किया। इसके माध्यम से धार्मिक पहचान को राजनीतिक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया गया, जिसने आंदोलन को व्यापक आधार प्रदान किया। हालांकि, यह भी स्पष्ट है कि इस आंदोलन में अंतर्निहित धार्मिक तत्वों के कारण इसकी प्रकृति जटिल थी, क्योंकि यह केवल राष्ट्रीय उद्देश्य तक सीमित नहीं था, बल्कि अंतरराष्ट्रीय और धार्मिक मुद्दों से भी जुड़ा हुआ था।

फिर भी, यह आंदोलन भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के साथ जुड़कर एक नई दिशा प्राप्त करता है, जहाँ धार्मिक और राजनीतिक तत्वों का समन्वय देखने को मिलता है।

असहयोग आंदोलन और जन-राजनीति का उदय

असहयोग आंदोलन भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ का प्रतिनिधित्व करता है। महात्मा गांधी के नेतृत्व में प्रारंभ हुआ यह आंदोलन औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध एक संगठित और व्यापक प्रतिरोध के रूप में सामने आया। इसका मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश शासन के साथ सहयोग समाप्त करके उसे नैतिक और राजनीतिक रूप से कमजोर करना था।

इस आंदोलन के अंतर्गत लोगों से सरकारी संस्थानों, न्यायालयों, विद्यालयों और विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करने का आह्वान किया गया। इसके साथ ही स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा दिया गया। यह आंदोलन केवल राजनीतिक स्तर तक सीमित नहीं था, बल्कि इसने सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों को भी प्रभावित किया।

असहयोग आंदोलन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इसकी व्यापक जनसहभागिता थी। इसमें ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों के लोगों ने सक्रिय रूप से भाग लिया। महिलाओं, छात्रों, किसानों और श्रमिकों की भागीदारी ने इसे एक सच्चे अर्थों में जनआंदोलन बना दिया।

इस आंदोलन ने भारतीय राजनीति में जन-राजनीति की अवधारणा को स्थापित किया, जहाँ आम जनता केवल दर्शक नहीं, बल्कि सक्रिय भागीदार बन गई। इस प्रकार, असहयोग आंदोलन ने राष्ट्रवाद को एक नई ऊर्जा और व्यापकता प्रदान की, जिसने आगे के आंदोलनों के लिए आधार तैयार किया।

धार्मिक-राजनीतिक एकता और राष्ट्रवाद का विस्तार

खिलाफत और असहयोग आंदोलनों का संयुक्त स्वरूप भारतीय इतिहास में एक अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करता है, जहाँ धार्मिक और राजनीतिक उद्देश्यों का समन्वय हुआ। महात्मा गांधी ने इस एकता को एक रणनीतिक अवसर के रूप में देखा और इसे हिंदू-मुस्लिम सहयोग को मजबूत करने के लिए उपयोग किया।

इस एकता का प्रभाव यह हुआ कि विभिन्न धार्मिक समुदाय एक साझा राजनीतिक मंच पर आए और उन्होंने औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संयुक्त रूप से संघर्ष किया। इससे राष्ट्रवाद को एक व्यापक और समावेशी स्वरूप प्राप्त हुआ, जिसमें विभिन्न वर्गों और समुदायों की भागीदारी सुनिश्चित हुई।

हालांकि, इस एकता में अंतर्विरोध भी निहित थे, क्योंकि विभिन्न समूहों के उद्देश्य और प्रेरणाएँ अलग-अलग थीं। इसके बावजूद, यह स्पष्ट है कि इस संयुक्त आंदोलन ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को नई दिशा दी और उसे जन-आधारित स्वरूप प्रदान किया।

इस प्रकार, खिलाफत और असहयोग आंदोलनों का अध्ययन यह दर्शाता है कि भारतीय राष्ट्रवाद का विकास एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया थी, जिसमें विभिन्न विचारधाराओं और हितों का समन्वय आवश्यक था। यह प्रक्रिया न केवल औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष को सशक्त बनाती है, बल्कि यह भारतीय समाज में एकता और सहभागिता की भावना को भी प्रोत्साहित करती है।

साहित्य समीक्षा

चंद्र (2009) ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के संदर्भ में खिलाफत और असहयोग आंदोलनों का विश्लेषण करते हुए यह तर्क दिया कि इन आंदोलनों ने राष्ट्रवाद को एक व्यापक जनआधारित स्वरूप प्रदान किया। उनके अनुसार गांधी द्वारा खिलाफत मुद्दे को राष्ट्रीय आंदोलन से जोड़ना एक रणनीतिक निर्णय था, जिसने हिंदू और मुस्लिम समुदायों के बीच अस्थायी एकता स्थापित की। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि असहयोग आंदोलन के माध्यम से पहली बार ग्रामीण क्षेत्रों और निम्न वर्गों की व्यापक भागीदारी सुनिश्चित हुई, जिससे आंदोलन की सामाजिक आधारशिला मजबूत हुई और औपनिवेशिक शासन पर नैतिक दबाव बढ़ा।

सरकार (1983) ने इन आंदोलनों का आलोचनात्मक विश्लेषण करते हुए यह बताया कि खिलाफत आंदोलन का धार्मिक स्वरूप भारतीय राष्ट्रवाद के लिए एक चुनौती भी था। उनके अनुसार यह आंदोलन अल्पकालिक एकता का कारण बना, किंतु दीर्घकालिक दृष्टि से इसने सांप्रदायिक राजनीति को भी बल दिया। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि असहयोग आंदोलन की सफलता के बावजूद, उसकी अचानक समाप्ति ने जनआंदोलन की गति को बाधित किया और राजनीतिक असंतोष को आंशिक रूप से निराशा में परिवर्तित कर दिया।

ब्राउन (1994) ने भारतीय राजनीति के विकास के संदर्भ में इन आंदोलनों की भूमिका का विश्लेषण करते हुए यह कहा कि गांधी ने धार्मिक और राजनीतिक तत्वों के संयोजन के माध्यम से एक नई प्रकार की जन-राजनीति का निर्माण किया। उनके अनुसार यह रणनीति अत्यंत प्रभावी थी, क्योंकि इसने लोगों की भावनाओं और आस्थाओं को आंदोलन से जोड़ा। उन्होंने यह भी बताया कि इस प्रक्रिया ने भारतीय राजनीति को अधिक सहभागी और जनोन्मुख बनाया।

गुहा (2007) ने भारतीय समाज और राजनीति के अंतर्संबंधों का अध्ययन करते हुए यह तर्क दिया कि खिलाफत और असहयोग आंदोलनों ने राष्ट्रवाद को सामाजिक स्तर पर गहराई तक पहुंचाया। उनके अनुसार इन आंदोलनों ने किसानों, श्रमिकों और महिलाओं को आंदोलन में शामिल किया, जिससे यह एक व्यापक सामाजिक प्रक्रिया बन गया। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि यह जनसहभागिता राष्ट्रवाद के स्थायी विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण थी।

मेटकाफ (1995) ने औपनिवेशिक विचारधाराओं के संदर्भ में इन आंदोलनों का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि खिलाफत और असहयोग आंदोलनों ने ब्रिटिश शासन के वैचारिक आधार को चुनौती दी। उनके अनुसार इन आंदोलनों ने यह प्रदर्शित किया कि औपनिवेशिक सत्ता केवल सैन्य और प्रशासनिक शक्ति पर आधारित नहीं थी, बल्कि उसकी वैधता भी महत्वपूर्ण थी, जिसे इन आंदोलनों ने कमजोर किया।

बोस (2015) ने दक्षिण एशिया के आधुनिक इतिहास में इन आंदोलनों की भूमिका का विश्लेषण करते हुए यह तर्क दिया कि उन्होंने राष्ट्रवाद को एक सांस्कृतिक और भावनात्मक आयाम प्रदान किया। उनके अनुसार धार्मिक प्रतीकों और राष्ट्रीय उद्देश्यों के संयोजन ने आंदोलन को अधिक प्रभावशाली बनाया, जिससे लोगों की व्यापक भागीदारी सुनिश्चित हुई।

बेयली (1988) ने भारतीय समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया का अध्ययन करते हुए यह बताया कि इन आंदोलनों ने सामाजिक संरचना को भी प्रभावित किया। उनके अनुसार जनसहभागिता के कारण पारंपरिक सामाजिक सीमाएँ कमजोर हुईं और विभिन्न वर्गों के बीच एक नई प्रकार की एकता विकसित हुई, जिसने राष्ट्रवाद को मजबूती प्रदान की।

हसन (1997) ने खिलाफत आंदोलन के ऐतिहासिक महत्व का विश्लेषण करते हुए यह तर्क दिया कि यह आंदोलन मुस्लिम

समुदाय की राजनीतिक चेतना का महत्वपूर्ण प्रतीक था। उनके अनुसार इस आंदोलन ने मुस्लिम समाज को औपनिवेशिक राजनीति में सक्रिय भागीदारी के लिए प्रेरित किया, किंतु इसके अंत के साथ ही यह एकता कमजोर हो गई और सांप्रदायिक विभाजन की प्रक्रिया तेज हो गई।

मिनॉल्ट (1982) ने खिलाफत आंदोलन का विस्तृत अध्ययन करते हुए यह बताया कि यह आंदोलन धार्मिक भावना और राजनीतिक असंतोष का संयोजन था। उनके अनुसार इसके नेतृत्व ने मुस्लिम समाज को संगठित किया और इसे एक व्यापक राजनीतिक आंदोलन में परिवर्तित किया, जो बाद में राष्ट्रीय आंदोलन के साथ जुड़ गया।

रॉय (2011) ने आर्थिक दृष्टिकोण से इन आंदोलनों का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि औपनिवेशिक आर्थिक नीतियों के कारण उत्पन्न असंतोष ने इन आंदोलनों को गति दी। उनके अनुसार आर्थिक शोषण और गरीबी ने लोगों को आंदोलन में भाग लेने के लिए प्रेरित किया, जिससे यह आंदोलन अधिक व्यापक और प्रभावशाली बन गया।

सेन (1981) ने गरीबी और सामाजिक असमानता के संदर्भ में इन आंदोलनों का अध्ययन करते हुए यह तर्क दिया कि आर्थिक समस्याएँ जनसहभागिता का प्रमुख कारण थीं। उनके अनुसार लोगों ने इन आंदोलनों को अपने सामाजिक और आर्थिक अधिकारों की प्राप्ति के माध्यम के रूप में देखा, जिससे उनकी भागीदारी बढ़ी।

हबीब (2010) ने ऐतिहासिक दृष्टिकोण से इन आंदोलनों का विश्लेषण करते हुए यह बताया कि उन्होंने औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध एक व्यापक प्रतिरोध को संगठित किया। उनके अनुसार इन आंदोलनों ने विभिन्न वर्गों और समुदायों को एकजुट किया और राष्ट्रवाद को एक सशक्त दिशा प्रदान की।

तालिका १: साहित्य समीक्षा का सारांश और मुख्य निष्कर्ष

क्रम संख्या	साहित्य संदर्भ	प्रमुख विषय	मुख्य निष्कर्ष
1	चंद्र (2009)	जनआधारित राष्ट्रवाद	आंदोलनों ने राष्ट्रवाद को व्यापक जनआंदोलन में परिवर्तित किया।
2	सरकार (1983)	आलोचनात्मक दृष्टिकोण	धार्मिक तत्वों ने अल्पकालिक एकता और दीर्घकालिक विभाजन दोनों उत्पन्न किए।
3	ब्राउन (1994)	जन-राजनीति	धार्मिक और राजनीतिक संयोजन से जनसहभागिता बढ़ी।
4	गुहा (2007)	सामाजिक विस्तार	आंदोलनों ने विभिन्न वर्गों को राष्ट्रवाद से जोड़ा।
5	मेटकाफ (1995)	वैचारिक चुनौती	आंदोलनों ने औपनिवेशिक वैधता को कमजोर किया।
6	बोस (2015)	सांस्कृतिक आयाम	धार्मिक प्रतीकों ने आंदोलन को भावनात्मक शक्ति दी।
7	बेयली (1988)	सामाजिक परिवर्तन	सामाजिक सीमाएँ कमजोर हुईं और एकता बढ़ी।
8	हसन (1997)	मुस्लिम राजनीति	आंदोलन ने मुस्लिम चेतना को जागृत किया।
9	मिनॉल्ट (1982)	खिलाफत आंदोलन	धार्मिक और राजनीतिक तत्वों का संयोजन प्रमुख था।
10	रॉय (2011)	आर्थिक कारण	आर्थिक शोषण ने आंदोलन को गति दी।
11	सेन (1981)	सामाजिक असमानता	आर्थिक समस्याओं ने जनभागीदारी को बढ़ाया।
12	हबीब (2010)	ऐतिहासिक विश्लेषण	आंदोलनों ने राष्ट्रवाद को सशक्त दिशा दी।

निष्कर्ष

खिलाफत और असहयोग आंदोलन भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में एक निर्णायक चरण का प्रतिनिधित्व करते हैं, जहाँ पहली बार व्यापक स्तर पर जनसहभागिता और धार्मिक-राजनीतिक एकता का समन्वय देखने को मिला। इन आंदोलनों ने यह स्पष्ट किया कि औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष केवल अभिजात्य वर्ग तक सीमित नहीं रह सकता, बल्कि इसके लिए समाज के विभिन्न वर्गों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है। महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन ने इस असंतोष को संगठित रूप प्रदान किया, जबकि खिलाफत आंदोलन ने मुस्लिम समुदाय को व्यापक राजनीतिक प्रक्रिया से जोड़ा। यद्यपि इन आंदोलनों के भीतर वैचारिक और उद्देश्यगत अंतर्विरोध मौजूद थे तथा इनके अचानक अवसान ने कुछ निराशा भी उत्पन्न की, फिर भी इनका ऐतिहासिक महत्व अत्यंत व्यापक है। इन आंदोलनों ने भारतीय राष्ट्रवाद को जनआधारित स्वरूप प्रदान किया, औपनिवेशिक शासन की वैधता को चुनौती दी तथा आगे के स्वतंत्रता आंदोलनों के लिए ठोस आधार तैयार किया। इस प्रकार, इनका अध्ययन भारतीय राष्ट्रवाद की जटिलता और विकास प्रक्रिया को समझने के लिए अत्यंत आवश्यक है।

संदर्भ सूची

[1] चंद्र, ब. (2009). इंडियाज स्ट्रगल फॉर इंडिपेंडेंस.
[2] सरकार, स. (1983). मॉडर्न इंडिया.
[3] ब्राउन, ज. (1994). मॉडर्न इंडिया.
[4] गुहा, र. (2007). इंडिया आफ्टर गांधी.

[5] मेटकाफ, त. र. (1995). आइडियोलॉजीज ऑफ द राज.
[6] बोस, स. (2015). मॉडर्न साउथ एशिया.
[7] बेयली, क. ए. (1988). इंडियन सोसाइटी.
[8] हसन, म. (1997). लीगेसी ऑफ अ डिवाइडेड नेशन.
[9] मिनॉल्ट, ग. (1982). द खिलाफत मूवमेंट.
[10] रॉय, त. (2011). इकोनॉमिक हिस्ट्री.
[11] सेन, अ. (1981). पावर्टी स्टडीज.
[12] हबीब, इ. (2010). हिस्टोरिकल स्टडीज.